

वर्तमान संकटकालीन विश्व में बौद्ध सांस्कृतिक मूल्यों की प्रासंगिकता

डॉ. गलदन सेंगे

सहायक प्राध्यापक, बौद्ध अध्ययन विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सारांश: वर्तमान विश्व युद्ध, जलवायु-परिवर्तन, आर्थिक विषमता, विस्थापन, सांप्रदायिक तनाव, डिजिटल दुष्प्रचार और मानसिक असुरक्षा जैसे परस्पर जुड़े संकटों से गुजर रहा है। यह शोध-पत्र प्रतिपादित करता है कि बौद्ध सांस्कृतिक मूल्य केवल निजी आध्यात्मिक साधना तक सीमित नहीं हैं, बल्कि व्यक्ति, समाज और वैश्विक संस्थाओं के नैतिक पुनर्गठन के लिए उपयोगी आधार प्रदान कर सकते हैं। चार आर्य सत्य संकट को दुःख, उसके कारण, निरोध की संभावना और उपचार-पथ के रूप में समझने की विश्लेषणात्मक पद्धति देते हैं। करुणा पीड़ित के प्रति सक्रिय उत्तरदायित्व जगाती है, मैत्री शत्रु-निर्माण की राजनीति को चुनौती देती है, अहिंसा साधन और लक्ष्य की एकता स्थापित करती है, मध्यम मार्ग अतिवादी उपभोग तथा कठोर वंचना—दोनों से बचने की दिशा देता है, जबकि प्रतीत्यसमुत्पाद मनुष्य, समाज और प्रकृति की परस्पर निर्भरता को स्पष्ट करता है। लेख पालि निकायों, धम्मपद तथा आधुनिक बौद्ध नैतिक चिंतन के व्याख्यात्मक अध्ययन पर आधारित है। निष्कर्षतः इन मूल्यों की प्रासंगिकता तभी सार्थक होगी, जब उन्हें कर्मकांड या भावनात्मक उपदेश तक सीमित न रखकर सार्वजनिक नीति, शिक्षा, अर्थव्यवस्था, पर्यावरणीय न्याय, संवाद और शांति-निर्माण में संस्थागत रूप दिया जाए।

बीज शब्द: बौद्ध संस्कृति, करुणा, मैत्री, अहिंसा, मध्यम मार्ग, प्रतीत्यसमुत्पाद, वैश्विक संकट, पर्यावरणीय न्याय।

1. प्रस्तावना

इक्कीसवीं शताब्दी की तकनीकी उपलब्धियों ने मनुष्य की संचार, उत्पादन और उपचार-क्षमता को बढ़ाया है, किंतु इन्हीं उपलब्धियों के बीच भय, अकेलापन, युद्ध, पर्यावरणीय विनाश और विषमता भी गहरी हुई है। संकट अब अलग-अलग घटनाओं का नाम नहीं रह गया है। एक क्षेत्र का युद्ध खाद्य और ऊर्जा की कीमतों को दूरस्थ समाजों में प्रभावित करता है। जलवायु-परिवर्तन आजीविका, स्वास्थ्य, प्रवासन और राजनीतिक तनाव को एक साथ बढ़ाता है। सामाजिक माध्यम सूचना को लोकतांत्रिक बनाते हैं, परंतु घृणा और असत्य को भी अभूतपूर्व गति प्रदान करते हैं। अतः वर्तमान संकटकाल को केवल प्रशासनिक अक्षमता या संसाधनों की कमी से नहीं समझा जा सकता। इसके भीतर लोभ, द्वेष और मोह से संचालित सांस्कृतिक प्रवृत्तियाँ भी सक्रिय हैं।

बौद्ध परंपरा मनुष्य के दुःख को किसी दैवी दंड के रूप में नहीं देखती। वह दुःख की स्थितियों, उसके कारणों और उसके निरोध की संभावना की जाँच करती है। बुद्ध का प्रथम उपदेश दुःख, दुःख-समुदय, दुःख-निरोध और दुःख-निरोधगामिनी प्रतिपदा को एक अनुशासित उपचार-पद्धति के रूप में प्रस्तुत करता है। यही पद्धति समकालीन संकटों पर लागू करने से नैतिक



भावुकता के स्थान पर कारणपरक विश्लेषण संभव होता है। समस्या की पहचान के साथ यह भी पूछा जाता है कि कौन-सी तृष्णाएँ, संस्थाएँ और मिथ्या धारणाएँ संकट को पुनरुत्पादित कर रही हैं।

इस शोध-पत्र में बौद्ध सांस्कृतिक मूल्यों से आशय उन जीवन-दृष्टियों, आचरण-नियमों और सामाजिक संवेदनाओं से है, जो बुद्ध की शिक्षाओं से विकसित हुई और एशिया के विविध समाजों में स्थानीय रूप ग्रहण करती रहीं। इनमें करुणा, मैत्री, अहिंसा, प्रज्ञा, शील, सम्यक आजीविका, संतोष, संवाद और सह-अस्तित्व प्रमुख हैं। बौद्ध संस्कृति एकरूप नहीं है; इसलिए लेख किसी एक देश या संप्रदाय की रीति को सार्वभौमिक मानने के बजाय प्रारंभिक बौद्ध सिद्धांतों और उनके आधुनिक नैतिक अर्थों पर केंद्रित है।

2. अध्ययन का उद्देश्य और पद्धति

इस अध्ययन के तीन उद्देश्य हैं। पहला, वर्तमान वैश्विक संकटों के नैतिक और सांस्कृतिक आयामों को स्पष्ट करना। दूसरा, प्रमुख बौद्ध मूल्यों का उनके मूल वैचारिक संदर्भ में विश्लेषण करना। तीसरा, यह देखना कि ये मूल्य व्यक्तिगत आचरण से आगे सार्वजनिक जीवन और वैश्विक संस्थाओं में किस प्रकार प्रयुक्त हो सकते हैं। अध्ययन गुणात्मक, व्याख्यात्मक और आलोचनात्मक पद्धति अपनाता है। पालि निकायों के चयनित सुत्तों, धम्मपद तथा मान्य आधुनिक अध्ययनों को प्राथमिक और द्वितीयक स्रोत के रूप में पढ़ा गया है।

यहाँ प्रासंगिकता का अर्थ किसी प्राचीन सूत्र को आधुनिक समस्या पर यांत्रिक रूप से आरोपित करना नहीं है। ऐतिहासिक बुद्ध ने परमाणु शस्त्र, कृत्रिम बुद्धिमत्ता या आधुनिक राष्ट्र-राज्य पर प्रत्यक्ष कथन नहीं किया था। अतः ग्रंथ और वर्तमान के बीच विवेकपूर्ण व्याख्या आवश्यक है। बौद्ध सिद्धांत दिशा देते हैं, जबकि नीति का विशिष्ट रूप लोकतांत्रिक विमर्श, वैज्ञानिक प्रमाण और स्थानीय अनुभव से निर्धारित होगा। पीटर हार्वी ने बौद्ध नैतिकता को कर्म, अभिप्राय, सद्गुण और दुःख-निवारण से जुड़ी ऐसी परंपरा के रूप में विवेचित किया है, जिसमें मानसिक दशा तथा सामाजिक परिणाम दोनों महत्त्व रखते हैं।

इस सीमा की स्वीकृति शोध को दो अतियों से बचाती है। पहली अति यह दावा है कि बौद्ध धर्म के पास प्रत्येक वैश्विक समस्या का तैयार समाधान है। दूसरी अति यह है कि आध्यात्मिक परंपराएँ सार्वजनिक जीवन में निरर्थक हैं। इस लेख का मत है कि बौद्ध मूल्य न तो तकनीकी नीति का विकल्प हैं और न केवल निजी सात्वना। वे लक्ष्य, साधन और मानवीय संबंधों के मूल्यांकन का नैतिक प्रतिमान उपलब्ध कराते हैं।

3. संकटकाल की बौद्ध व्याख्या: लोभ, द्वेष और मोह

बौद्ध मनोविज्ञान में अकुशल आचरण की तीन मूल प्रवृत्तियाँ लोभ, द्वेष और मोह मानी जाती हैं। वर्तमान वैश्विक व्यवस्था में लोभ केवल व्यक्ति की इच्छा नहीं है; वह असीम उपभोग, संसाधनों के संचय, श्रम के शोषण और लाभ को जीवन के अंतिम मानदंड के रूप में स्वीकार करने वाली संस्थागत संस्कृति बन सकता है। द्वेष जातीय घृणा, सांप्रदायिक ध्रुवीकरण, युद्धोन्माद और शरणार्थियों के अमानवीकरण में दिखाई देता है। मोह उस अज्ञान में व्यक्त होता है जो परस्पर निर्भर जीवन को अलग-अलग स्वार्थों का समूह समझता है और दीर्घकालीन परिणामों को तात्कालिक लाभ के लिए अनदेखा करता है।



धम्मपद का प्रसिद्ध कथन है कि वैर से वैर शांत नहीं होता, बल्कि अवैर से शांत होता है। नारद थेर के अंग्रेजी अनुवाद में यह शिक्षा यमकवग्न में दी गई है। इसका अर्थ अन्याय के प्रति निष्क्रियता नहीं, बल्कि यह चेतावनी है कि प्रतिशोध की मानसिकता हिंसा के चक्र को लंबा करती है। न्याय आवश्यक है, पर न्याय की प्रक्रिया यदि अपमान, सामूहिक दंड और स्थायी शत्रुता पर टिकी हो तो वह नए दुःख को जन्म दे सकती है।

चार आर्य सत्त्यों का ढाँचा वैश्विक संकट-विश्लेषण में उपयोगी है। जलवायु-आपदा, युद्ध या विषमता को पहले उनके वास्तविक मानवीय दुःख सहित स्वीकारना होगा। फिर उनके कारणों में जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता, शस्त्र-प्रतिस्पर्धा, औपनिवेशिक विरासत, असमान संस्थाएँ और लालसा-आधारित उपभोग की जाँच करनी होगी। निरोध का अर्थ संकट की पूर्ण समाप्ति की काल्पनिक घोषणा नहीं, बल्कि यह विश्वास है कि कारण बदले जा सकते हैं। मार्ग में नैतिक अनुशासन, ज्ञान, सामुदायिक सहयोग और नीतिगत परिवर्तन एक साथ आते हैं।

4. करुणा और मैत्री: वैश्विक नैतिक समुदाय का आधार

करुणा का सामान्य अर्थ दया से अधिक व्यापक है। यह दूसरे के दुःख को पहचानकर उसके निवारण के लिए सक्रिय होने की प्रवृत्ति है। मैत्री सभी प्राणियों के कल्याण की आकांक्षा है। करणीय मेत सुत्त में साधक से कहा गया है कि वह सब प्राणियों के सुख और सुरक्षा की कामना करे तथा माता द्वारा अपने एकमात्र पुत्र की रक्षा जैसी अपरिमित भावना विकसित करे। यह उपमा निकट संबंध की तीव्रता को सार्वभौमिक नैतिक वृत्ति में विस्तृत करती है।

वैश्विक राजनीति प्रायः नागरिक और विदेशी, मित्र और शत्रु, उपयोगी और अनुपयोगी मनुष्य के कठोर विभाजन बनाती है। करुणा इन पहचानों को मिटाती नहीं, पर यह आग्रह करती है कि पहचान किसी व्यक्ति की मूल गरिमा को समाप्त नहीं करती। युद्ध में नागरिक, विस्थापित परिवार, भूख से पीड़ित समुदाय और आपदा से प्रभावित लोग सहायता के अधिकारी हैं, चाहे उनकी राष्ट्रीयता या आस्था कुछ भी हो। करुणा-आधारित सहायता में पीड़ित को निष्क्रिय पात्र नहीं, बल्कि निर्णय में भागीदार माना जाता है।

थिक न्यात हान ने सजगता और करुणा को सामाजिक अन्याय, शोषण तथा प्रकृति के प्रति हिंसा से जुड़ी सक्रिय साधना के रूप में प्रस्तुत किया। उनके चौदह सचेतनता-प्रशिक्षणों में मतांधता से बचने, दुःख से विमुख न होने और शोषण के विरुद्ध जिम्मेदार आचरण पर बल मिलता है। आधुनिक संलग्न बौद्ध धर्म का महत्त्व इसी परिवर्तन में है कि ध्यान, सेवा और संरचनात्मक न्याय को परस्पर विरोधी न माना जाए। भिक्षु बोधि भी समकालीन बौद्ध नैतिकता को गरीबी, जलवायु और अन्याय के प्रश्नों से जोड़ते हैं।

फिर भी करुणा को केवल सद्भावना मान लेना पर्याप्त नहीं है। अस्पताल, शरणार्थी शिविर, विद्यालय और राहत-व्यवस्था को संसाधन चाहिए। अतः करुणा का सार्वजनिक रूप न्यायपूर्ण बजट, सार्वभौमिक स्वास्थ्य, खाद्य सुरक्षा, श्रम-सम्मान और भेदभाव-विरोधी कानून में दिखाई देना चाहिए। करुणा नीति को प्रमाण-विहीन नहीं बनाती; वह प्रमाण के उपयोग को मानवीय उद्देश्य देती है।



5. अहिंसा, संवाद और शांति-निर्माण

अहिंसा बौद्ध शील का मूल आधार है। पंचशील का पहला नियम प्राणी-हत्या से विरत रहने का प्रशिक्षण है। यह केवल हत्या न करने का निषेध नहीं, बल्कि जीवन के प्रति सावधानी का विकास है। राहुल के प्रति बुद्ध का उपदेश कर्म करने से पहले, करते समय और करने के बाद उसके परिणामों की समीक्षा करने को कहता है। यदि कर्म स्वयं या दूसरों के लिए पीड़ा लाता है तो उसे छोड़ना चाहिए। यह परिणाम-सचेत नैतिकता डिजिटल व्यवहार, प्रशासनिक निर्णय और युद्धनीति तक विस्तृत की जा सकती है।

अहिंसा का अर्थ यह नहीं कि उत्पीड़न के सामने चुप रहा जाए। बौद्ध नैतिक दृष्टि में सम्यक वाणी असत्य, विभाजनकारी भाषण, कठोर वचन और निरर्थक प्रलाप से बचाती है। शांति-निर्माण में इसका व्यावहारिक अर्थ सत्यापन, सम्मानजनक भाषा, विरोधी पक्ष की मानवीयता और संवाद के सुरक्षित मंच हैं। सामाजिक माध्यमों पर कोई संदेश साझा करने से पहले उसके सत्य, उद्देश्य और संभावित हानि की समीक्षा करना सम्यक वाणी का आधुनिक रूप हो सकता है।

धम्मपद क्रोध पर अक्रोध, बुराई पर अच्छाई और कृपणता पर दान से विजय की बात करता है। यह नैतिक विजय राजनीतिक अधीनता नहीं है। इसका आशय है कि संघर्ष के साधन उस भविष्य को नष्ट न करें जिसे संघर्ष प्राप्त करना चाहता है। सत्याग्रही प्रतिरोध, पुनर्स्थापनात्मक न्याय, युद्धोत्तर मेल-मिलाप और सामुदायिक मध्यस्थता इस दिशा के निकट आते हैं, बशर्ते पीड़ित की आवाज दबाई न जाए।

विश्व शांति पर बौद्ध दृष्टिकोण संबंधी अध्ययनों में आंतरिक शांति और संस्थागत शांति के संबंध पर बल दिया गया है। पांडेय और कौर ने टिकाऊ विश्व शांति के लिए पंचशील, करुणा और अष्टांगिक मार्ग की भूमिका पर चर्चा की है। किंतु आंतरिक परिवर्तन को राजनीतिक जवाबदेही का विकल्प बनाना अनुचित होगा। शांति के लिए मन का प्रशिक्षण और न्यायपूर्ण संस्थाएँ दोनों आवश्यक हैं।

6. मध्यम मार्ग, संयम और आर्थिक विषमता

मध्यम मार्ग का प्रारंभिक अर्थ इंद्रिय-सुख में डूबने और कठोर आत्म-पीड़ा की दो अतियों से बचना है। वर्तमान संदर्भ में इसका सावधान विस्तार असीम उपभोग और अमानवीय अभाव—दोनों की आलोचना करता है। यह गरीबी को संतोष का नाम देकर उचित नहीं ठहराता। भोजन, स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास और सम्मानजनक आजीविका मनुष्य की आधारभूत आवश्यकताएँ हैं। दूसरी ओर, आवश्यकता से बहुत अधिक उपभोग को सफलता का सार्वभौमिक आदर्श मानना पृथ्वी की सीमाओं तथा दूसरों के अधिकारों की उपेक्षा है।

रुद्रपाल सुत्त संसार को अतृप्त और तृष्णा का दास बताता है। भिक्षु जाणमोलि और भिक्षु बोधि के अनुवाद में यह कथन सुत्त संख्या 82 के अंतर्गत मिलता है। आधुनिक उपभोक्ता संस्कृति निरंतर यह अनुभूति पैदा करती है कि वर्तमान वस्तु, प्रतिष्ठा या अनुभव पर्याप्त नहीं है। विज्ञापन और डिजिटल तुलना तृष्णा को निजी कमी की अनुभूति से जोड़ते हैं। परिणाम ऋण, मानसिक तनाव, कचरा, कार्बन उत्सर्जन और श्रम-दबाव के रूप में सामने आता है।



सम्यक आजीविका आर्थिक जीवन को नैतिकता के भीतर लाती है। ऐसा रोजगार जो हत्या, नशा, छल या मानव-हानि पर आधारित हो, बौद्ध मार्ग से असंगत है। वाणिज्य सुत्त में शस्त्र, जीव, मांस, मादक पदार्थ और विष के व्यापार से बचने की शिक्षा दी गई है। आज इसके आधार पर हथियार उद्योग, मानव तस्करी, नशीले उत्पाद, विनाशकारी उत्पादन और छलपूर्ण डिजिटल व्यापार की आलोचना की जा सकती है।

बौद्ध संयम का सकारात्मक अर्थ पर्याप्तता है। इसका संस्थागत रूप परिपत्र अर्थव्यवस्था, मरम्मत, साझा संसाधन, श्रम-सम्मान, प्रगतिशील सामाजिक सुरक्षा और जिम्मेदार निवेश में विकसित हो सकता है। टिकाऊ उपभोग पर बौद्ध अध्ययन यह रेखांकित करते हैं कि उपभोग का नैतिक मूल्य केवल क्रय-शक्ति से नहीं, उसके सामाजिक और पर्यावरणीय परिणामों से आँका जाना चाहिए।

7. प्रतीत्यसमुत्पाद और पर्यावरणीय उत्तरदायित्व

प्रतीत्यसमुत्पाद का सिद्धांत बताता है कि घटनाएँ स्वतंत्र और स्थायी सत्ता के रूप में नहीं, बल्कि कारणों तथा परिस्थितियों पर निर्भर होकर उत्पन्न होती हैं। इसका शास्त्रीय सूत्र है कि इसके होने पर वह होता है, इसके उत्पन्न होने पर वह उत्पन्न होता है, और इसके न होने पर वह नहीं होता। मूल बौद्ध संदर्भ में यह दुःख और पुनर्जन्म की कारण-श्रृंखला का विश्लेषण है। पर्यावरणीय चिंतन में इसका उपयोग सावधानी से करना चाहिए; फिर भी यह पृथक स्वार्थ की धारणा पर गहरा प्रश्न उठाता है।

मनुष्य की श्वास वनस्पतियों, महासागरों और वायुमंडलीय संतुलन पर निर्भर है। भोजन मिट्टी, जल, परागण, किसान, परिवहन और सामाजिक स्थिरता की संयुक्त देन है। जलवायु-संकट इसी निर्भरता की उपेक्षा का परिणाम है। समृद्ध समाजों का ऐतिहासिक उत्सर्जन उन समुदायों को अधिक प्रभावित कर सकता है जिनका योगदान बहुत कम रहा है। इसलिए पर्यावरणीय करुणा न्याय के बिना अधूरी है।

बौद्ध पर्यावरणवाद के समर्थन के साथ उसकी आलोचनात्मक समीक्षा भी आवश्यक है। केसी जावर्नॉड ने यह दिखाया है कि बौद्ध धर्म को स्वभावतः पूर्ण पर्यावरणवादी घोषित करने पर ऐतिहासिक और दार्शनिक आपत्तियाँ उठती हैं; फिर भी बौद्ध सिद्धांतों से एक सुसंगत पर्यावरणीय प्रतिक्रिया विकसित की जा सकती है। हाल का क्षेत्रीय अध्ययन यह भी बताता है कि बौद्ध जलवायु-कार्यकर्ता ध्यान, भावनात्मक संतुलन और सक्रियता के बीच जटिल संबंध अनुभव करते हैं। इससे स्पष्ट है कि सजगता कार्यकर्ता को थकान से बचा सकती है, पर वह नीतिगत कार्रवाई का स्थान नहीं लेती।

व्यावहारिक स्तर पर प्रतीत्यसमुत्पाद कार्बन नीति, जैव-विविधता, जल-साझेदारी और आपदा-न्याय को संयुक्त रूप से देखने की प्रेरणा देता है। एक देश की ऊर्जा-नीति दूसरे देश के मौसम, कृषि और प्रवासन को प्रभावित कर सकती है। अतः राष्ट्रीय हित की दीर्घकालीन रक्षा भी वैश्विक सहयोग से जुड़ी है।

8. प्रज्ञा, सजगता और डिजिटल संकटकाल

प्रज्ञा वस्तुओं को यथाभूत समझने की क्षमता है। यह केवल सूचना-संग्रह नहीं, बल्कि अनित्यता, दुःख और अनात्मता की अंतर्दृष्टि से आसक्ति तथा भ्रम को कम करने वाली समझ है। वर्तमान सूचना-व्यवस्था में मनुष्य के पास समाचार बहुत हैं, पर उनकी सत्यता, संदर्भ और उद्देश्य पर विचार करने का समय कम है। डिजिटल मंच ध्यान को व्यापारिक वस्तु बनाते हैं। उत्तेजना, भय और क्रोध अधिक सहभागिता उत्पन्न करते हैं; इसलिए विभाजनकारी सामग्री को संरचनात्मक लाभ मिलता है।

सजगता वर्तमान अनुभव पर स्पष्ट, अनुशासित और अनुक्रियाहीन ध्यान विकसित करती है। सतिपट्टान सुत्त शरीर, वेदना, चित्त और मानसिक विषयों के अवलोकन की पद्धति प्रस्तुत करता है। डिजिटल जीवन में इसका अर्थ प्रतिक्रिया से पहले ठहरना, भावनात्मक उत्तेजना को पहचानना और सूचना की जाँच करना है। इससे व्यक्ति अपनी क्रोधपूर्ण प्रतिक्रिया को देख सकता है, पर सत्यापन के लिए स्वतंत्र पत्रकारिता, वैज्ञानिक साक्षरता और मंचों की जवाबदेही भी चाहिए।

सजगता के व्यावसायीकरण की आलोचना आवश्यक है। यदि ध्यान का प्रयोग केवल कर्मचारी को विषाक्त कार्य-संस्कृति सहने या उपभोक्ता को क्षणिक शांति देने के लिए हो, तो वह दुःख के संरचनात्मक कारणों को छिपा सकता है। बौद्ध मार्ग में सम्यक स्मृति को सम्यक दृष्टि, सम्यक संकल्प, सम्यक वाणी, सम्यक कर्म और सम्यक आजीविका से अलग नहीं किया गया। राहुल के अनुसार बौद्ध मानसिक अनुशासन नैतिकता और प्रज्ञा के व्यापक मार्ग का अंग है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता के युग में बौद्ध मूल्य तीन प्रश्न उठाते हैं: तकनीक किस दुःख को कम करती है? उसका लाभ और जोखिम किन समूहों में बाँटा जाता है? उसके निर्माण में लोभ, द्वेष या भ्रम किस रूप में उपस्थित हैं? उत्तरदायी तकनीकी शासन के लिए पारदर्शिता, मानवीय निरीक्षण, पक्षपात की जाँच और कमजोर समुदायों की भागीदारी आवश्यक है।

9. बहुलता, सहिष्णुता और संवाद

बौद्ध परंपरा में जाँच और अनुभव को महत्त्व देने वाला पक्ष धार्मिक बहुलता के लिए उपयोगी है। कालाम सुत्त में किसी बात को केवल श्रुति, परंपरा, अनुमान, ग्रंथ-संग्रह या गुरु के सम्मान के कारण स्वीकार न करने की शिक्षा दी गई है। जब स्वयं समझ आए कि प्रवृत्तियाँ अकुशल, दोषपूर्ण और दुःखकारी हैं, तब उन्हें त्यागना चाहिए। इस प्रसंग को मनमाने संशयवाद का समर्थन समझना गलत है। सुत्त नैतिक परिणाम, बुद्धिमान व्यक्तियों की समीक्षा और अनुभवजन्य परीक्षण को जोड़ता है।

संवाद में बौद्ध विनयशीलता यह स्वीकार करती है कि अपनी धारणा से आसक्ति संघर्ष को बढ़ा सकती है। इसका अर्थ सत्य और असत्य को समान मानना नहीं है। इसका अर्थ अपने मत को प्रमाण, करुणा और संशोधन की संभावना के साथ रखना है। सांप्रदायिक तनाव में साझा मानवीय दुःख से आरंभ होने वाला संवाद पहचान-आधारित आरोपों की तीव्रता कम कर सकता है।

अशोक के शिलालेखों में संप्रदायों के प्रति सम्मान और वाणी-संयम का उल्लेख भारतीय इतिहास में नैतिक शासन का महत्वपूर्ण उदाहरण है। बारहवें प्रमुख शिलालेख में अपने संप्रदाय की अनावश्यक प्रशंसा तथा दूसरे की निंदा से बचने और



परस्पर श्रवण की शिक्षा मिलती है। रोमिला थापर ने अशोक के धम्म को विविध सामाजिक समूहों के बीच व्यवहार-संबंधी नैतिक नीति के रूप में विश्लेषित किया है। आधुनिक लोकतंत्र में इसका समकक्ष धार्मिक स्वतंत्रता, समान नागरिकता और आलोचनात्मक संवाद है, न कि राज्य द्वारा किसी एक धर्म का आधिपत्य।

10. शिक्षा, शासन और वैश्विक संस्थाओं में अनुप्रयोग

बौद्ध सांस्कृतिक मूल्यों को सार्वजनिक जीवन में लागू करने के लिए उन्हें नैतिक घोषणाओं से आगे ले जाना होगा। शिक्षा में करुणा का अर्थ भावनात्मक साक्षरता, संघर्ष-समाधान, विविधता के प्रति सम्मान और सेवा-अधिगम है। सजगता-अभ्यास वैकल्पिक, समावेशी और आघात-संवेदी होना चाहिए। विद्यार्थियों पर धार्मिक आस्था थोपे बिना ध्यान, आत्मनिरीक्षण और उत्तरदायी वाणी के धर्मनिरपेक्ष शैक्षिक रूप विकसित किए जा सकते हैं।

शासन में सम्यक दृष्टि का अर्थ निर्णय के दीर्घकालीन और परस्पर जुड़े परिणामों को देखना है। करुणा का अर्थ बजट और कानून के प्रभाव का आकलन सबसे कमजोर नागरिक की दृष्टि से करना है। अहिंसा पुलिस, कारागार और संघर्ष-प्रबंधन में न्यूनतम बल, जवाबदेही और पुनर्वास को प्राथमिकता देती है। सम्यक आजीविका सार्वजनिक खरीद और निवेश को मानवाधिकार तथा पर्यावरणीय मानकों से जोड़ती है।

विश्व स्तर पर बौद्ध मूल्य जलवायु-वार्ता में साझा किंतु विभेदित उत्तरदायित्व, मानवीय सहायता में निष्पक्षता और युद्ध में नागरिक सुरक्षा का नैतिक समर्थन करते हैं। संयुक्त राष्ट्र के टिकाऊ विकास-विमर्श से बौद्ध पर्याप्तता, परस्पर निर्भरता और करुणा का रचनात्मक संवाद संभव है। कोवाच ने बौद्ध दृष्टि से टिकाऊ विकास की चर्चा करते हुए इच्छा, उपभोग और पर्यावरणीय उत्तरदायित्व के संबंध पर बल दिया है।

समुदाय स्तर पर संघ की धारणा सहभागी संस्थाओं की प्रेरणा देती है। संघ का आधुनिक रूप धार्मिक समुदाय तक सीमित नहीं होना चाहिए। स्थानीय शांति समिति, सहकारी संस्था, जल-संरक्षण समूह, सामुदायिक रसोई और मानसिक स्वास्थ्य सहयोग-वृत्त साझा उत्तरदायित्व के मंच बन सकते हैं। निर्णय में स्त्रियों, दलितों, आदिवासियों, अल्पसंख्यकों, प्रवासियों और दिव्यांग व्यक्तियों की वास्तविक भागीदारी आवश्यक है। केवल प्रतिनिधित्व का प्रतीक पर्याप्त नहीं है।

11. सीमाएँ और आलोचनात्मक सावधानियाँ

बौद्ध मूल्यों की चर्चा करते समय परंपरा का आदर्शीकरण नहीं होना चाहिए। बौद्ध-बहुल समाज भी युद्ध, जातीय राष्ट्रवाद, लैंगिक असमानता और पर्यावरणीय क्षति से मुक्त नहीं रहे हैं। इससे सिद्धांतों की निरर्थकता सिद्ध नहीं होती, पर यह स्पष्ट होता है कि धार्मिक पहचान नैतिक आचरण की गारंटी नहीं है। करुणा की भाषा सत्ता-समीक्षा, कानून और संसाधन-वितरण से अलग हो जाए तो वह सजावटी नैतिकता बन सकती है।

दूसरी सावधानी सांस्कृतिक अनुवाद से संबंधित है। अनात्मता को व्यक्ति के अधिकारों की उपेक्षा का आधार नहीं बनाया जा सकता। कर्म-सिद्धांत को पीड़ित की वर्तमान दुर्दशा का दोष उसी पर डालने के लिए प्रयोग करना बौद्ध करुणा के विपरीत है।

कर्म मुख्यतः चेतनापूर्ण कर्म और उसके नैतिक फल का सिद्धांत है। अंगुत्तर निकाय में बुद्ध कहते हैं कि वे चेतना को कर्म कहते हैं। सामाजिक संकटों में व्यक्तिगत कर्म के साथ ऐतिहासिक अन्याय और संस्थागत शक्ति का विश्लेषण अनिवार्य है।

तीसरी सीमा शांति की भाषा के दुरुपयोग की है। शक्तिशाली पक्ष कभी-कभी पीड़ित से शांत रहने की अपेक्षा करता है, जबकि अन्याय जारी रहता है। वास्तविक अहिंसा सत्य-कथन, सुरक्षा, न्याय और जवाबदेही के बिना संभव नहीं। बौद्ध क्षमा को कानूनी दण्डमुक्ति या स्मृति-विलोपन नहीं माना जा सकता।

अंततः बौद्ध दृष्टि विज्ञान का विकल्प नहीं है। जलवायु-नीति को उत्सर्जन-आँकड़ों, महामारी-प्रबंधन को चिकित्सीय प्रमाण और आर्थिक नीति को विश्वसनीय सामाजिक आँकड़ों पर आधारित होना चाहिए। बौद्ध मूल्य यह निर्धारित करने में सहायता करते हैं कि ज्ञान का उपयोग किसके लिए, किस साधन से और किस उत्तरदायित्व के साथ किया जाए।

12. निष्कर्ष

वर्तमान संकटकाल की विशेषता समस्याओं की परस्परता है। युद्ध खाद्य-असुरक्षा बढ़ाता है, विषमता स्वास्थ्य और शिक्षा को प्रभावित करती है, जलवायु-परिवर्तन विस्थापन तथा संघर्ष की आशंका बढ़ाता है और डिजिटल दुष्प्रचार इन सभी प्रश्नों पर सामूहिक विवेक को कमजोर करता है। ऐसी परिस्थिति में बौद्ध सांस्कृतिक मूल्य व्यक्ति को भीतर की शांति तक सीमित रहने का निर्देश नहीं देते। उनका व्यापक अर्थ दुःख को देखने, उसके कारणों का सामना करने और उसके निवारण के लिए कुशल साधनों का चयन करने में है।

करुणा पीड़ित की ओर सक्रिय उत्तरदायित्व है। मैत्री शत्रु की स्थायी छवि को तोड़ती है। अहिंसा न्यायपूर्ण साधनों की माँग करती है। मध्यम मार्ग पर्याप्तता और संतुलन देता है। प्रतीत्यसमुत्पाद पर्यावरणीय तथा सामाजिक निर्भरता को स्पष्ट करता है। प्रज्ञा दुष्प्रचार और विचारधारात्मक आसक्ति की जाँच करती है। शील निजी चरित्र को सार्वजनिक उत्तरदायित्व से जोड़ता है। इन मूल्यों का संयुक्त स्वरूप ही उनकी प्रासंगिकता को अर्थपूर्ण बनाता है।

सबसे महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह है कि सांस्कृतिक मूल्य संस्थागत रूप ग्रहण किए बिना सीमित प्रभाव रखते हैं। करुणा को स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा में, अहिंसा को संवाद तथा न्याय में, सम्यक आजीविका को उत्तरदायी अर्थव्यवस्था में और परस्पर निर्भरता को जलवायु-सहयोग में व्यक्त होना होगा। भिक्षु बोधि ने बौद्ध धर्म की सामाजिक भूमिका पर विचार करते हुए दुःख के व्यापक, सामाजिक रूपों के प्रति सक्रिय उत्तरदायित्व की आवश्यकता रेखांकित की है।

बौद्ध संस्कृति वर्तमान विश्व को कोई तैयार राजनीतिक कार्यक्रम नहीं देती; पर वह संकट की जड़ों को पहचानने की नैतिक दृष्टि और परिवर्तन की अनुशासित साधना देती है। इसकी वास्तविक प्रासंगिकता किसी गौरव-घोषणा में नहीं, बल्कि उस व्यवहार में प्रमाणित होगी जो भय के स्थान पर अभय, घृणा के स्थान पर मैत्री, लालसा के स्थान पर पर्याप्तता और उदासीनता के स्थान पर करुणापूर्ण उत्तरदायित्व को स्थापित करे।



संदर्भ-सूची

- [1] भिक्षु जाणमोलि एवं भिक्षु बोधि, अनुवादक, The Middle Length Discourses of the Buddha: A Translation of the Majjhima Nikāya, Boston: Wisdom Publications, 1995, पृ. 56–59, 523–526, 686–687.
- [2] हार्वी, पीटर, An Introduction to Buddhist Ethics: Foundations, Values and Issues, Cambridge: Cambridge University Press, 2000, पृ. 8–14.
- [3] नारद थेर, अनुवादक, The Dhammapada, Kuala Lumpur: Buddhist Missionary Society, 1978, गाथा 5 एवं 223.
- [4] नॉर्मन, के. आर., अनुवादक, The Group of Discourses, Vol. 2, Oxford: Pali Text Society, 1992, पृ. 17–18.
- [5] बोधि, भिक्षु, “Buddhist Ethics for a World in Crisis,” Insight Journal, जून 2024, पृ. 4–9.
- [6] थिक न्यात हान, Interbeing: Fourteen Guidelines for Engaged Buddhism, 3rd ed., Berkeley: Parallax Press, 1998, पृ. 25–39.
- [7] बोधि, भिक्षु, The Connected Discourses of the Buddha: A Translation of the Saṃyutta Nikāya, Boston: Wisdom Publications, 2000, पृ. 575–576.
- [8] राहुल, बालपोला, What the Buddha Taught, revised ed., New York: Grove Press, 1974, पृ. 68–75.
- [9] पांडेय, सत्येन्द्र कुमार एवं सिमरजीत कौर, “Buddhist Approach to Sustainable World Peace,” United Nations Day of Vesak 2019, Hanoi: Religion Publisher, 2019, पृ. 521–528.
- [10] पियारत्तन थेर, बेरगम, “A Buddhist Perspective on Overconsumption and Its Negative Effects toward Society and Environment,” in Buddhist Approach to Responsible Consumption and Sustainable Development, Hanoi: Hong Duc Publishing House, 2019, पृ. 3–19.
- [11] कर्न्स, जोएना; निल्सन डेमर्ट्ज़िस, डैनियल एवं अन्य, “How Western Buddhist Climate Activists Negotiate Tensions between Religious Identity and Climate Action,” Current Psychology 43 (2024), पृ. 33172–33184.
- [12] जावर्नोड, केसी, “The World on Fire: A Buddhist Response to the Environmental Crisis,” Religions 11, no. 8 (2020), पृ. 4–12.
- [13] वाल्श, मॉरिस, अनुवादक, The Long Discourses of the Buddha: A Translation of the Dīgha Nikāya, Boston: Wisdom Publications, 1995, पृ. 335–350.
- [14] बोधि, भिक्षु, The Numerical Discourses of the Buddha: A Translation of the Aṅguttara Nikāya, Boston: Wisdom Publications, 2012, पृ. 278–281, 480–481, 790, 963.
- [15] थापर, रोमिला, Ashoka and the Decline of the Mauryas, 3rd ed., New Delhi: Oxford University Press, 2012, पृ. 255–266.



-
- [16] कोवाच, गाबोर, “Buddhist Approach to Sustainability and Achieving Millennium Development Goals,” Buddhist Economics Research Platform 7 (2014), पृ. 7–18.
- [17] बोधि, भिक्खु, Social and Communal Dimensions of Buddhist Ethics, Kandy: Buddhist Publication Society, 1998, पृ. 1–12.